

महाराष्ट्र राज्य और अन्य

बनाम

आशा अरुण गवली और अन्य

27 अप्रैल, 2004

[दोराईस्वामी राजू और अरिजीत पासायत, जे.जे.]

जेल - अभिलेखों का उचित रखरखाव और कैदियों की सुरक्षा – आवश्यकता - किसी मामले की कार्यवाही के दौरान जेल अधिकारियों की लापरवाही उच्च न्यायालय द्वारा पाई गई - जेल अधिकारियों के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू करने और उनके तथा जिम्मेदार अधिकारियों के खिलाफ अनुकरणीय लागत लगाने का निर्देश - अपील में, अभिनिर्धारित किया: उच्च न्यायालय का आदेश न्यायोचित - हालांकि, आगे विस्तृत जांच के निर्देश दिए - जेलों में दयनीय स्थिति का अध्ययन करने के लिए कुछ निर्देश जारी किए गए।

नजरबंदी के आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की गई थी। निरोध आदेश में यह देखा गया था कि बंदी ने जेल में रहते हुए जेल में उससे मिलने आए कुछ लोगों की मिलीभगत से कुछ लोगों की हत्या कर दी थी। उच्च न्यायालय ने आगंतुक रजिस्टर के अवलोकन पर, सह-साजिशकर्ताओं की कथित यात्रा के बारे में कोई प्रविष्टि नहीं पाई और न ही उनके बंदी से मिलने का कोई रिकॉर्ड पाया। कुछ अधिकारियों द्वारा दायर किए गए हलफनामे असंगत थे। उच्च न्यायालय ने देखा कि अधिकारियों की मिलीभगत के बिना आगंतुकों का प्रवेश आधिकारिक रिकॉर्ड में

उनके नाम के बिना संभव नहीं होता; और कुछ अधिकारियों के कदाचार के संबंध में, जेल अधिकारियों की संलिप्तता, उनकी लापरवाही और मिलीभगत के बारे में स्पष्टीकरण मांगा गया था, लेकिन कुछ प्रारंभिक अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के बाद, वास्तव में कुछ भी नहीं किया गया था। इसलिए, उच्च न्यायालय ने माना कि हिरासत का आदेश अप्रासंगिक सामग्री पर पारित किया गया था और जेल में मामलों की स्थिति को देखते हुए तीन जेल अधीक्षकों के खिलाफ मुकदमा शुरू करने का निर्देश दिया गया था। न्यायालय ने अधीक्षकों, अतिरिक्त मुख्य सचिव (गृह), पुलिस आयुक्त और जेल महानिरीक्षक के खिलाफ भी अनुकरणीय जुर्माना लगाया। राज्य, अतिरिक्त मुख्य सचिव (गृह) और महानिरीक्षक कारागार ने इस न्यायालय के समक्ष अपील दायर की है।

अपीलों का निस्तारण करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए न्यायसंगत ठहराया कि संबंधित अधिकारियों के सक्रिय सहयोग के बिना ऐसी गतिविधियाँ संभव नहीं होतीं। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने जेल अधिकारियों की चूक और आयोग के ऐसे कृत्यों पर उचित रूप से नाराजगी व्यक्त की है जो आईपीसी के विभिन्न प्रावधानों के तहत दंडनीय अपराध है और इसलिए, उन्हें अनुकरणीय लागत से दण्डित करने के अलावा, अनिवार्य रूप से उनके खिलाफ आपराधिक अभियोजन शुरू करने का निर्देश दिया। उच्च न्यायालय ने लागत

अधिरोपित करके एक आवश्यक परिणाम के रूप में जो चिंता व्यक्त की है, उसमें बिल्कुल भी दोष नहीं पाया जा सकता है।

1.2. उच्च न्यायालय द्वारा जो देखा गया है, उसकी पृष्ठभूमि में, एक बात बहुत स्पष्ट है कि जेल अधिकारियों द्वारा पूरी तरह से लापरवाही की गई है। कैदियों से मिलने वाले व्यक्तियों के रिकॉर्ड को बनाए रखने का मामले में, दाखिल किए गए हलफनामे में स्वीकार की गई तथ्यात्मक स्थिति यह है कि अधिकारी स्वयं प्रचलित स्थिति के बारे में सचेत थे, लेकिन फिर भी सिवाय एक ढोंग वाली मौखिक सेवा के उन्हें दंड से मुक्त रहने की अनुमति दी गई। जिस उद्देश्य के लिए जेलों की स्थापना की गई है; जेल अधिकारियों ने जिस तरह से काम किया है, वह पूरी तरह से नष्ट हो गया है। यदि जेलों की स्थापना का वास्तविक उद्देश्य अपराधियों को समाज में प्रचलन से बाहर रखना और यह सुनिश्चित करना है कि उनकी गतिविधियों को प्रतिबंधित या कम किया जाए, तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह केवल कागज पर एक पवित्र इच्छा बनी हुई है और वास्तव में जो होता है वह ठीक इसके विपरीत है। जेल अधिकारियों ने कानून के जनादेश की पूरी तरह से अवहेलना करके अपराधियों को उनके अपने अपराधों में समर्थन दिया और यह उन्हें और विशेष रूप से बंदी को सजा से बचाने के उद्देश्य से किया गया था। उच्च न्यायालय ने देखा कि महाराष्ट्र जेल सुविधा कैदी नियम, 1962 का प्रथम दृष्टया पालन नहीं किया गया था। [714-बी-ई; जी]

2.1. अधिकारियों ने गंभीरता और तात्कालिकता की पूर्ण कमी का प्रदर्शन किया है, लेकिन उस मामले की विषम परिस्थितियों में जहां पूरी प्रणाली जांच के दायरे में है,

तथ्यात्मक स्थिति का विस्तृत अध्ययन आवश्यक है। जिस जेल से यह मामला जुदा है, वहां क्या हुआ है, वह अन्य जेलों से अलग हो भी सकता है और नहीं भी और इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि ऐसी चीजें अब नहीं हो रही हैं। लेकिन अन्य जेलों में भी स्थिति बेहतर नहीं होने के बारे में संदेह बना हुआ है। [715-सी-डी]

2.2. राज्य सरकार इस मामले की जांच करेगी और विभागीय रूप से या आपराधिक कानूनों के अनुसार कार्रवाई करेगी। अतिरिक्त मुख्य सचिव और जेल महानिरीक्षक पर जुर्नमा लगाने के निर्देश को वर्तमान में छूट दी गई है। यदि आवश्यक हो तो सरकार इसके खिलाफ कार्रवाई शुरू करने के लिए स्वतंत्र है, भले ही वे सेवानिवृत्त हो चुके हों। चूँकि अन्य अधिकारी जिनके संबंध में जुर्नमा लगाया गया था, उन्होंने अधिरोपण पर सवाल नहीं उठाया है, ऐसे अधिकारियों के संबंध में उच्च न्यायालय के निर्देश अपरिवर्तित हैं। [715-ई-एफ]

2.3. न्यायिक अधिकारियों को समय-समय पर जेलों का निरीक्षण करने का निर्देश दिया जाता है और उसी दौरान, वर्तमान मामले में देखी गई परेशान करने वाली विशेषताओं को ध्यान में रखा जाएगा और उनकी रिपोर्टों के आधार पर उचित उपचारात्मक उपाय और कार्रवाई की जाएगी; और यह कि सरकार ऐसी खामियों की प्रकृति की जांच करने और उनकी पुनरावृत्ति को प्रभावी ढंग से रोकने की संभावनाओं का पता लगाने और स्थिति की आवश्यकताओं को पर्याप्त रूप से पूरा करने के लिए उचित वैधानिक प्रावधानों या नियमों द्वारा उन्हें रोकने के लिए तरीकों और साधनों को तैयार करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक पूर्व

जेल महानिरीक्षक और पुलिस महानिदेशक की सहायता के लिए एक आयोग की नियुक्ति पर विचार कर सकती है। [715-जी-एच; 716-ए-बी]

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 284/1998

आपराधिक रिट याचिका सं. 64/97 में बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 5.5.97 से।

साथ में

आपराधिक अपील सं. 1998 की 285 और 286

मुकेश के.गिरि, मनीष सरन और रवि के.एडसुर (एनपी), अपीलार्थियों की ओर से।

डॉ. एम.डी.अदकर और विश्वजीत सिंह, रेखा पांडे, सुश्री सुषमा सूरी, पी.परमेश्वरन (एनपी) और डी.एम.नरगोलकर, प्रत्यर्थियों की ओर से।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया –

अरिजीत पासायत, न्यायाधिपति

कैदियों के सुधार और जेल की स्थितियों में सुधार की चिंता को न्यायिक रूप से मान्यता दी गई है। लेकिन इन मामलों में "कैदियों द्वारा जेलों में दरबार आयोजित करना", "कैदियों के लिए पांच सितारा होटल में आराम" या "जेल में मुफ्त प्रवेश और निकास" को स्वीकार नहीं जा सकता है, वह भी घृणित अक्षमता द्वारा चिह्नित प्रवेश के बयानों द्वारा उन लोगों के लिए अशोभनीय है जिन्हें अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को सख्ती से निभाने के लिए नियुक्त किया गया है, यानी जेल

अधिकारियों और उच्च पदस्थ सरकारी पदाधिकारियों के लिए। बंबई उच्च न्यायालय ने एक व्यक्ति अरुण गवली (जिसे इसके बाद "बंदी" के रूप में संदर्भित किया गया है) को हिरासत में लेने के आदेश की वैधता पर विचार करते हुए कुछ निर्देश दिए, जिन पर आगे ध्यान दिया जाना चाहिए।

ये तीनों अपीलें आपस में जुड़ी हुई हैं और बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ द्वारा दिए गए विवादित फैसले के अनुरूप हैं। उच्च न्यायालय ने निरोध के आदेश को अपास्त करने के अलावा निम्नलिखित निर्देश दिए गए:

"राज्य सरकार को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी, 217 और 218 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए और कानून के किसी अन्य प्रासंगिक प्रावधान के तहत भी, या तो स्वतंत्र रूप से या हिरासत में लिए गए व्यक्ति के खिलाफ लंबित अभियोजन में सर्व/श्री डी.एम. जाधव, एम.जी. घोरपड़े और एल.टी. समुद्रवार और अन्य जेल अधिकारियों, यदि कोई हो, के खिलाफ अभियोजन शुरू करने का निर्देश दिया गया है।

श्री पी.सुब्रमण्यम, अतिरिक्त मुख्य सचिव (गृह), श्री एस.सी. मल्होत्रा, मुंबई के पुलिस आयुक्त और श्री एम.जी.नरवणे, जेल महानिरीक्षक, पुणे, 25,000 रुपये प्रत्येक के अनुकरणीय लागत का भुगतान करेंगे।

सर्व/श्री डी.एम. जाधव, एम.जी. घोरपड़े और एल.टी. समुद्रवार, जेल अधीक्षक, 15000 रुपये प्रत्येक अनुकरणीय लागत का भुगतान करेंगे।

महाराष्ट्र सरकार इन अधिकारियों द्वारा देय सम्पूर्ण अनुकर्णीय लागत, जैसा कि इस न्यायालय में बताया गया है, 10 दिनों की अवधि के भीतर जमा करेगी और राज्य सरकार उसके बाद कानून के अनुसार संबंधित अधिकारियों से इस तरह से भुगतान की गई लागत की वसूली करेगी।

सरकार 10 दिनों की अवधि के भीतर श्री डब्ल्यू.जी.चार्डे, अधिवक्ता, जिन्होंने न्यायमित्र के रूप में कार्य किया है, को पारिश्रमिक के रूप में 5000 रुपये का भुगतान करेगी।“

निरुद्ध की पत्नी आशा गोवाली ने राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 3 के तहत पारित निरोध के आदेश की वैधता पर सवाल उठाते हुए एक रिट याचिका दायर की। जैसा की ऊपर उल्लेख किया गया है, रिट याचिका की सुनवाई के दौरान सामने आये कुछ चौंकाने वाली तथ्य स्थितियों को ध्यान में रखते हुए हिरासत को रद्द करते हुए निर्देश दिए गए थी और जो किसी भी कानून का पालन करने वाले नागरिक और कानून लागू करने वाले अधिकारियों के लिए 'बुरे सपने' की तरह लगना चाहिए। जबकि महाराष्ट्र राज्य अभियोजन शुरू करने से संबंधित निर्देशों पर सवाल उठाता है, अन्य दो अपीलें, अर्थात् 1998 की आपराधिक अपील संख्या 286 श्री पी. सुब्रमण्यम द्वारा दायर की गई हैं, जो उस समय मुख्य सचिव (गृह) के रूप में कार्य कर रहे थे और 1998 की आपराधिक अपील संख्या 285 श्री महादु गोविंदराव नरवणे द्वारा दायर की गई है, जो उस समय जेल महानिरीक्षक के रूप में कार्य कर रहे

थे। यद्यपि महाराष्ट्र राज्य द्वारा निर्णय की आलोचना की है, लेकिन श्री एस.सी. मल्होत्रा, पुलिस आयुक्त मुंबई, श्री डी.एम. जाधव, श्री एम.जी. घोरपड़े और श्री एल.टी. समुद्रवार, जो जेल अधीक्षक के रूप में कार्य कर रहे थे, द्वारा कोई अलग अपील दायर नहीं की गई है, हालांकि उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश भी उनसे संबंधित हैं।

उच्च न्यायालय ने व्याप्त राक्षसीपन की कुछ चौंकाने वाली विशेषताओं पर ध्यान दिया और बंदी प्रत्यक्षीकरण आवेदन से निपटने के दौरान, घूँघट को भेदने की कोशिश की और वास्तविक चिंताजनक और साथ ही घृणित स्थिति को देखा। निरोध के आदेश में कुछ टिप्पणियों के कारण यह आवश्यक महसूस किया गया था जेल में रहने के दौरान बंदी ने जेल में उससे मिलने ए कुछ व्यक्तियों की सक्रिय भागीदारी के साथ मिलीभगत से कुछ व्यक्तियों की हत्या की थी।

आगंतुक रजिस्टर आदि जैसे कुछ रजिस्ट्रों को सत्यापन के लिए मंगाया गया और उच्च न्यायालय ने देखा कि तथाकथित सह-षड्यंत्रकारियों की कथित यात्रा के बारे में कोई प्रविष्टि नहीं थी और उनके बंदी से मिलने का कोई रिकॉर्ड नहीं था। कुछ अधिकारियों को शपथ पत्र दाखिल करने के लिए कहा गया था। कई असंगत और अपरिवर्तनीय बयानों को देखते हुए उच्च न्यायालय ने हलफनामों को कोई विश्वसनीयता नहीं दी और उपरोक्त पृष्ठभूमि में यह देखा गया कि निरोध का आदेश अप्रासंगिक सामग्री पर पारित किया गया था और यह अक्षम्य था। मामले की संवेदनशील प्रकृति को देखते हुए, एक विद्वान अधिवक्ता को न्यायमित्र के रूप में नियुक्त किया गया और उच्च न्यायालय ने उनकी सहायता की सराहना की।

जेल में मामलों की दुखद स्थिति और संबंधित अधिकारियों की पूर्ण उदासीनता को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने महसूस किया कि दोषी अधिकारियों पर अनुकरणीय जुर्माना लगाने की आवश्यकता थी और इसी तरह ऊपर उद्धृत निर्देश दिए गए थे।

तीनों अपीलों में निर्देशों की वैधता पर सवाल उठाए गए हैं। श्री मुकेश के.गिरि, विद्वान अधिवक्ता ने अपीलार्थी-राज्य की ओर से उपस्थित होते हुए प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय को पर्याप्त सामग्री के बिना सीधे अभियोजन शुरू करने का निर्देश नहीं देना चाहिए था। इसके अलावा, हिरासत का आदेश प्रमाणिक रूप से पारित किया गया था और दोषी अधिकारियों के खिलाफ भी उचित कार्रवाई की गई है और इसलिए, लागत लगाना अनुचित है। अपीलार्थियों की ओर से अन्य विद्वान अधिवक्ता द्वारा लिया गया रुख भी ऐसा ही है।

हालाँकि निरोध आदेश को रद्द करने वाले आदेश की वैधता पर सवाल किया गया था, लेकिन इसे बहुत गंभीरता से नहीं लिया गया था। प्रत्यर्थी नंबर 1-रिट याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एम.डी. अदकर ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने वास्तविकताओं पर ध्यान दिया है और एक उचित आदेश पारित किया है और किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

उच्च न्यायालय के आदेश को पढ़ने पर कुछ चौंकाने वाली विशेषताएं सामने आई हैं। जेल में गतिविधियाँ, अनधिकृत व्यक्तियों का प्रवेश और "दरबार" का आयोजन उच्च न्यायालय के समक्ष दायर हलफनामों में राज्य अधिकारियों द्वारा लिए गए रक्षात्मक

रुख का हिस्सा हैं। हम यह जानकर हैरान हैं कि जेल में व्यक्तियों के प्रवेश, जेल में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों के उचित रिकॉर्ड के रखरखाव से संबंधित मानदंडों का पालन करने की तुलना में उल्लंघन अधिक देखा गया है और और नियमों और विनियमों को हवा में उड़ा दिया गया है। अधिकारियों द्वारा दायर किए गए हलफनामे इस बात को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। जेल के अंदर भव्य पार्टियों के बारे में अक्सर सुना और पढ़ा जाता था। आधिकारिक गतिविधियों की नियमितता में सामान्य सद्भावना को ध्यान में रखते हुए इस तरह की खबरों की प्रामाणिकता के बारे में कभी-कभी संदेह किया जाता था। लेकिन जेल अधिकारियों और अधिकारियों द्वारा दायर हलफनामों में की गई स्वीकारोक्ति इसे एक तथ्य के रूप में स्वीकार करती है। इससे भी अधिक चौंकाने वाली बात यह है कि कुछ लोग जेल में घुसे, कैदियों से मिले और अधिकारियों के बयानों को देखा जाये तो हत्या करने के लिए साजिश रची। इसलिए, उच्च न्यायालय का यह मानना उचित था कि संबंधित अधिकारियों के सक्रिय सहयोग के बिना ये चीजें संभव नहीं को सकती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने जेल अधिकारियों की चूक और आयोग के ऐसे कृत्यों पर न्यायोचित रूप से आश्चर्य व्यक्त किया है, जो आईपीसी के विभिन्न प्रावधानों के तहत दंडनीय अपराध हैं और इसलिए, अनिवार्य रूप से उनके खिलाफ आपराधिक अभियोजन शुरू करने का निर्देश दिया है, इसके अलावा उन्हें अनुकरणीय लागत के साथ शामिल किया है।

उच्च न्यायालय ने ध्यान दिया और हमारे विचार में सही है कि जब आगंतुकों के नाम जो कथित रूप से हिरासत में लिए गए लोगों को हिरासत में लेने की साजिश का हिस्सा थी, संबंधित अवधि के दौरान आगंतुकों की सूची में नहीं थे, तो आधिकारिक

रिकॉर्ड में उनके नाम दर्ज किए बिना लोगों के जेलों में अनधिकृत रूप से प्रवेश करने के बारे में एक पेटेंट स्वीकारोक्ति है जो उन लोगों की मिलीभगत के अलावा असंभव होगा जिन्हें अन्यथा ऐसी चीजें होने से रोकना चाहिए था। उच्च न्यायालय ने कहा कि इस बात का कोई स्पष्टीकरण नहीं था कि कोई कैसे जेल में प्रवेश कर सकता है और बंदी से मिल सकता है और फिर भी कोई प्रवेश नहीं किया जायेगा। यह तब तक संभव नहीं है जब तक कि जेल अधिकारी स्वयं इसमें भागीदार न हों। एक ओर, विवरण देने वाला प्राधिकारी जेल के अन्दर बंदियों की गतिविधियों और रची गई साजिशों का उल्लेख कर रहा था, और साथ ही अधिकारिक रिकॉर्ड उनके कथन को झुठला रहे थे। कुछ अधिकारियों के कदाचार के संबंध में, जेल अधिकारियों की संलिप्तता और यरवदा सेंट्रल जेल से संबंधित उनकी लापरवाही या मिलीभगत के संबंध में स्पष्टीकरण मांगा गया था। उच्च न्यायालय ने देखा कि कुछ प्रारंभिक अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के बाद, वास्तव में कुछ भी ठोस नहीं किया गया था। यह महसूस किया गया कि जेल महानिरीक्षक, अन्य उच्च पदस्थ अधिकारियों और मुख्य सचिव ने अनुचित लापरवाही और उदासीनता के साथ काम किया और मामले में किसी भी गंभीरता या संवेदनशीलता का पूर्ण अभाव प्रदर्शित किया गया था। यदि हिरासत में लिए गए लोगों की आपराधिक गतिविधियों को रोकना था और संबंधित लोगों की ओर से गंभीर खामियों की पुनरावृत्ति को रोकना था, तो ठोस कार्रवाई आवश्यक थी जो अभी तक स्वयं को सबसे अच्छी तरह से ज्ञात कारणों से नहीं की गई थी। उपरोक्त पृष्ठभूमि में उच्च न्यायालय द्वारा लागत अधिरोपित करके एक आवश्यक परिणाम के रूप में प्रदर्शित चिंता को बिल्कुल भी दोषपूर्ण नहीं पाया जा सकता है।

उच्च न्यायालय द्वारा जो देखा गया है, उसकी पृष्ठभूमि में एक बात बहुत स्पष्ट है कि जेल अधिकारियों द्वारा पूरी तरह से लापरवाही बरती गई है। कैदियों से मिलने वाले व्यक्तियों के रिकॉर्ड बनाए रखने के मामले में, दायर किए गए हलफनामे में स्वीकार की गई तथ्यात्मक स्थिति यह है कि अधिकारी स्वयं प्रचलित स्थिति से अवगत थे, लेकिन फिर भी सिवाय एक ढोंग वाली मौखिक सेवा के, उन्हें दंड से मुक्त रहने की अनुमति दी गई। जिस उद्देश्य के लिए जेलों की स्थापना की गई है, वह उद्देश्य जेल अधिकारियों के आचरण से पूरी तरह से नष्ट हो गया है। यदि जेलों की स्थापना का वास्तविक उद्देश्य अपराधियों को समाज में प्रचलन से बाहर रखना और यह सुनिश्चित करना है कि उनकी गतिविधियों को प्रतिबंधित या कम किया जाए, तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह केवल कागज पर एक पवित्र इच्छा बनकर रह गई है और वास्तव में जो होता है, वह ठीक इसके विपरीत है। हलफनामों में इस्तेमाल किए गए "पुलिस का लेखन पत्थर की दीवार और लोहे की पट्टी से परे चलता है" जैसे उच्च ध्वनि वाले शब्द अधिकारियों की कार्रवाई में प्रतिबिंबित नहीं हुए हैं और उस स्थिति के साथ वास्तविक न्याय नहीं करते हैं जिसके लिए केवल स्पष्ट रूप से एक कठोर/कार्रवाई की आवश्यकता थी। उच्च न्यायालय द्वारा, इसके विपरीत, उच्च न्यायालय ने अपने समक्ष रखी गई निर्विवाद सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि जेल अधिकारियों ने कानून के जनादेश की पूरी तरह से अवहेलना करके अपराधियों को उनके अपराधों में समर्थन दिया और ऐसा विशेष रूप से बंदी को सजा से बचाने के उद्देश्य से किया गया था। एक अधिकारी से अपेक्षा की जाती है कि वह लोगों की सुरक्षा के लिए कार्य करे और उनकी आपराधिक गतिविधियों को रोके। इस तरह की गतिविधियाँ केवल चूक या लोप नहीं

हैं, बल्कि उन अपराधों और अपराधियों की तुलना में अधिक खतरनाक हैं जो इन्हें अंजाम देते हैं, यह आधिकारिक तौर पर उन अपराधों के लिए कानून के तहत वास्तविक दायित्व से बचने और भागने के बहाने के रूप में प्रदान किया जाता है। यदि वे स्वयं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराधियों को उनकी आपराधिक गतिविधियों को अंजाम देने में मदद करके अपराधों में एक पक्ष बन जाते हैं, तो उनकी कैद को उनके अपराधों के लिए एक सुरक्षात्मक ढाल के रूप में उपयोग करते हुए, पुलिस अधिकारियों की साख को मरम्मत और मोचन से परे गंभीर रूप से नुकसान उठाना पड़ता है। ठीक यही उच्च न्यायालय ने देखा है और इसे सक्रिय करने और सुधारने का प्रयास किया है।

उच्च न्यायालय ने देखा कि महाराष्ट्र जेल सुविधा कैदी नियम, 1962, रिश्तेदारों आदि के साक्षात्कार के तरीके निर्धारित करता है। यह देखा गया कि इन प्रावधानों का प्रथम दृष्टया पालन नहीं किया गया था। विभिन्न जेलों में बंद विचाराधीन बंदी और कैदी जेल अधिकारियों की हिरासत में होते हैं और वे कैदियों की सुरक्षा, जेलों के रखरखाव और कैदियों के बीच अनुशासन के प्रवर्तन के लिए जिम्मेदार होते हैं। दिनांक 2.5.1997 के हलफनामे में जेल अधीक्षक की आम दलील निम्नलिखित शब्दों में थी:

"गेट रजिस्टर में प्रविष्टि का आभाव यह स्थापित करने के लिए निर्णायक सबूत नहीं है कि तथाकथित व्यक्ति जेल में प्रवेश कर चुके हैं। जाँच के दौरान पुलिस के समक्ष दिया गया बयान स्वीकार्य नहीं

है। आगे कहा गया है कि संबंधित अपराधों में प्रथम सूचना रिपोर्ट लंबे समय के बाद दर्ज की गई थी।”

यदि हलफनामे में जो कहा गया है वह वास्तविकता है तो उल्लंघन की प्रकृति और सीमा का पता लगाने के लिए आगे जांच करने की आवश्यकता नहीं है।

लेकिन हम महसूस करते हैं कि इस मामले में और विस्तृत जांच की आवश्यकता थी। इसलिए राज्य सरकार को इस मामले की विस्तृत जांच करनी चाहिए। हम इस बात से अवगत हैं कि अधिकारियों ने गंभीरता और तात्कालिकता की कमी का प्रदर्शन किया है, लेकिन मामले की विशिष्ट परिस्थितियों में जहां पूरी प्रणाली जांच के दायरे में है, तथ्यात्मक स्थिति का विस्तृत अध्ययन आवश्यक है। जिस जेल से यह मामला जुदा है, वहां जो कुछ हुआ है, वह अन्य जेलों से अलग हो भी सकता है और नहीं भी और इस बात की कोई सुनिश्चितता नहीं है कि अब ऐसी चीजें नहीं हो रही होंगी। लेकिन अन्य जेलों में भी स्थिति बेहतर नहीं होने के बारे में संदेह बना हुआ है।

इसलिए हम निम्नलिखित निर्देशों के साथ अपीलों का निस्तारण करते हैं:

(1) राज्य सरकार इस मामले की गहराई से जांच कराएगी और विभागीय या आपराधिक कानूनों के अनुसार जो भी कार्रवाई करनी होगी, वह आज से छह महीने के भीतर की जाएगी। अपीलार्थियों- महादु गोविंदराव नरवणे और पी. सुब्रमण्यम पर व्यक्तिगत रूप से लागत अधिरोपित करने के निर्देश वर्तमान के लिए माफ कर दिए जाते हैं।

(2) चूंकि अन्य अधिकारी जिनके संबंध में लागत लगाई गई थी, अधिरोपण पर सवाल नहीं उठाया है, ऐसे अधिकारियों के संबंध में उच्च न्यायालय के निर्देश अपरिवर्तित रहेंगे।

(3) जहाँ तक इस न्यायालय के समक्ष दो अपीलार्थी यानी पी.सुब्रमण्यम और महादु गोविंदराव नरवणे का सवाल है, यदि आवश्यक समझा जाए तो सरकार उनके खिलाफ कार्रवाई शुरू करने के लिए स्वतंत्र होगी, भले ही वे निर्देश के अनुसार जांच के आधार पर सेवानिवृत्त हुए हों।

(4) न्यायिक अधिकारी समय-समय पर जेलों का निरीक्षण करने जाते हैं। जब वे निरीक्षण करते हैं तो हस्तगत मामले में देखी गई परेशान करने वाली विशेषताओं को ध्यान में रखा जाएगा और सम्बंधित अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत, यदि कोई हो, के आधार पर उचित उपचारात्मक उपाय और कार्रवाई की जाएगी।

(5) सरकार सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक आयोग की नियुक्ति पर विचार कर सकती है, जिसे जेल के पूर्व महानिरीक्षक और पुलिस महानिदेशक की सहायता मिलेगी ताकि ऐसी खामियों की प्रकृति की जांच की जा सके और उनकी पुनरावृत्ति पर प्रभावी ढंग से अंकुश लगाने और तरीकों को तैयार करने की संभावनाओं का पता लगाया जा सके। और स्थिति की तात्कालिकताओं को पर्याप्त रूप से पूरा करने के लिए उचित वैधानिक प्रावधानों या नियमों द्वारा उन्हें रोकने का साधन है।

अपीलों का निस्तारण उपरोक्त शर्तों पर किया जाता है।

के.के.टी.

अपीलों का निस्तारण किया गया।

यह अनुवाद आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक अधिवक्ता विनायक कुमार जोशी की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।
